साहित्य के विविध विमर्श

उच्चतर शिक्षा निदेशालय, पंचकूला, हरियाणा से अनुमोदित एवं
गुरु नानक गर्ल्ज कॉलेज यमुनानगर हरियाणा द्वारा आयोजित
एक दिवसीय बहुविषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्र

संपादक

डॉ. गीतू खन्ना

संपादक मण्डल

डॉ. शक्ति, डॉ. अंजू, संदीप कौर

डॉ. लक्ष्मी गुप्ता, डॉ. अमनदीप कौ

डॉ. अनुभा जैन

27. श्री रामचरित मानस –सामासिक संस्कृति का अनुपम संवाहक 181

महेन्द्र प्रताप सिंह

28. साहित्य या सिनेमा 187

डॉ. ललिता शर्मा

29. Dalit Discourse In Literature Through The Selected Novels 191

Saloni

30. प्रेमचंद की कहानियों में वृद्ध–विमर्श..... 196

डॉ. सुनीता देवी

31. दलित कविता का प्रतिवादी स्वर..... 201

डॉ. प्रिया ए.

32. हिंदी सिनेमा का बदलता स्वरूप 207

डॉ. सुरैया खान

33. साहित्य में पर्यावरण विमर्श 214

डॉ. अमिता रेढ़ू

34. ਬਲਿਹਾਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਵਸਿਆ बलिहारी कुदरत वसिआ 224

ਡਾ. ਸੁਖਵਿੰਦਰ ਕੌਰ **डॉ. सुखविंदर कौर**

साहित्य में पर्यावरण विमर्श

डॉ. अमिता रेढ़ू
सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
गुरु नानक गर्ल्ज कॉलेज,
सन्तपुरा, यमुनानगर।

पर्यावरण 'परि + आवरण' इन दो शमदों से बना है, इसका अभिप्राय है चारों तरफ का घेरा। 'परि' का अर्थ है चारों ओर आच्छादित एवं सब दिशाओं में और आवरणम् का अर्थ है - घेरना।[1] अर्थात् चारों ओर से घेरने वाला। चारो ओर का भूमि, वायु और जल ही हमारा पर्यावरण है।

जीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त मौलिक तथा जैविक परिस्थितियों के योग को 'पर्यावरण' कहा गया है।[2] अर्थात् हमारे विकास को प्रभावित करने वाले चारों ओर विद्यमान संपूर्ण जड़ और चेतन पदार्थों का सामूहिक नाम 'पर्यावरण' है।

पर्यावरण का प्राणियों के जीवन में बहुत महत्त्व है। पर्यावरण से पृथ्क किसी जीव की कल्पना भी असम्भव है। पर्यावरण और जीवन का अन्योऽन्य सम्बन्ध है। प्रकृति में हमें जो वायु, जल, भूमि, वनस्पति और जीव-जन्तु दिखाई पड़ते हैं। ये सभी पर्यावरण की रचना करते हैं।

आकाष, वायु, जल, भूमि और अग्नि पर्यावरण के प्रमुख घटक है।[3] पुरुष इन्हीं तत्त्वों पर आधारित है। पर्यावरण के घटकों के पारस्परिक व्यवहार द्वारा प्रकृति का निरंतर संतुलन बना रहता है। यदि कोई भी घटक सीमा के बाहर निरंतर उपयोग में आता है तो पर्यावरण में असंतुलन होने लगता है। इसी प्राकृतिक असंतुलन का नाम प्रदूषण है। प्रलय का मूल कारण प्रदूषण ही है क्योंकि व्यक्त पदार्थों के गुणों में विकार होने पर प्रलय होता है।

पर्यावरण संरक्षण की धारणा

सभ्यता के अनुसार प्रदूषकों के रूप परिवर्तित होते रहे हैं। आदि मानव द्वारा

भोजन एवं आवास आदि की व्यवस्था के साथ अन्न, जल, लकड़ी आदि का प्रयोग करने से प्रकृति में असंतुलन एवं दोष बढ़ना शुरू हुआ। प्रदूषक के दुष्प्रभाव से वचने के लिए ऋषियों ने मनुष्य को अवगत किया है। वेदों के अनुसार हम ज्ञान-विज्ञान की उन्नति में लगे रहें, उसमें बाधक नहीं।

संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधषि।[4]

प्राचीन काल में गुरुकुलों और आश्रमों की स्थापना नदियों के संगमों पर और पहाड़ों की तलहटियों में की जाती थी। प्रकृति के सीधे सम्पर्क में रहने से जीवन सरल एवं कृत्रिमता से रहित रहता है। मनुष्य का मन-बुद्धि और शरीर शुद्ध एवं स्वस्थ रहता है। इसलिए वैदिक काल से मानव दीर्घायु, सुस्वास्थ्य, जीवनषक्ति, पशुकीर्ति, धन एवं विज्ञान के प्रति जागरूक रहा।[5]

पृथ्वी, जल, वायु, आकाष, चन्द्र व सूर्य आदि से समस्त पृथ्वी मण्डल का पर्यावरण बनता है। इन्हें वैदिक चिंतन में देवता माना गया है। प्रकृति के जिन पदार्थों से हमारे शरीर का निर्माण और पालन हो रहा है, उनका संरक्षण तन-मन-धन से करने का आदेष दिया है। शुद्धता एवं पवित्रता सृष्टि के पदार्थों का स्वभाव है। उसके निवारण के विषय में भी वैदिक वाङ्मय में वर्णन उपलब्ध होते हैं। प्रदूषक निवारण के लिए यज्ञ-हवन अत्यन्त सुगम एवं श्रेष्ठ साधन बताया गया है जिससे वायु, जल और अन्नादि की शुद्धि होती है। वनों की रक्षा, पशुपालन, शौच और अहिंसा के बिना यज्ञ संभव नहीं है।

यजुर्वेद में भी कहा है -

ओ३म् द्यौः शान्तिर्, अन्तरिक्षं शान्तिः, पृथिवी शान्तिर्, आपः शान्तिर्, ओषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्, विष्वेदेवाः शान्तिर्, ब्रह्मषान्तिः, सर्वं शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिर् एधि। ओ३म् शान्तिः शान्तिः, शान्तिः।।[6]

वर्तमान काल में मानव निर्दयता से वृक्षों को काट रहा है, नदियों को बांध रहा है, कारखानों से निकलने वाले ज़हरीले रसायनों को पानी में छोड़ रहा है, जिसके फलस्वरूप वर्षा का अभाव, सूखा पड़ना, धरती के अन्दर जल की समाप्ति एवं वायु प्रदूषण बढ़ता ही जा रहा है।

पौराणिक युग में ऋषि, महाकवि, नाटककार एवं ग्रन्थकारों ने लोगों का पर्यावरण संरक्षण सम्बंधी मानसिक चिंतन बनाए रखने के लिए अपने ग्रन्थों में प्रकृति के तत्त्वों को देवता का रूप देकर उसे शुद्ध रखने के लिए स्तुतियाँ की। गंगा जैसी नदियों को मोक्षकारिणी बताकर एक धारणा बना ली गई। वृक्षों को काटने से पाप और लगाने से पुण्य मिलता है, भूमि माता के समान और आकाष पिता के तुल्य वताया गया है। पृथ्वी सूक्त में भी कहा है- माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्या।

पशु-पक्षियों को देवी-देवताओं के वाहन का प्रतीक माना गया है। वैदिक समय के लोग वैद्यकरीति एवं ग्रन्थों के अनुसार ही कार्य करते थे। जिसे वह अपना धर्म समझते थे। इस कारण पर्यावरण शुद्ध रहता था।

वर्तमान समय में हम पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से जूझ रहे हैं। अतः पर्यावरण को शुद्ध रखने की दृष्टि से जनसंख्या पर नियंत्रण किया जाना अनिवार्य है। कम जनंसख्या, कम गतिषीलता व तकनीकी संसाधनों का कम दोहन प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होते हैं। आजकल भूमि, वायु, जल व ध्वनि प्रदूषण मुख्य हैं।

भूमि-प्रदूषण एवं संरक्षण

हमारी संस्कृति में भूमि की अत्यधिक महत्ता है। अथर्ववेद में पृथ्वी सूक्त में पृथ्वी के महत्त्व का वर्णन किया गया है और पृथ्वी को माता कहा गया है। माता जिस प्रकार पुत्र के लिए स्वयं प्रेम से दूध पिलाती है उसी प्रकार भूमि पुत्र के लिए अपना जल, अन्न-रस आदि पुष्टिकारक पदार्थ प्रदान करती है। भिन्न-भिन्न प्रकारों से यह पृथिवी पालन करती है। वेद में इस पृथिवी को गौ के समान बताया गया है कि जिस प्रकार गौ निष्चय बिना छटपटाहट किए धन-ऐष्वर्य की हजारों धाराएँ प्रदान करती है।[7]

प्राचीन काल में भूमि प्रदूषित होने के कारण नहीं थे। उस समय जनसंख्या अधिक नहीं थी और व्यक्ति कृत्रिम वस्तुओं का उपयोग नहीं करते थे। उस समय मनुष्य सीधे प्रकृति से सम्बन्ध रखता था और प्राकृतिक वस्तुओं का प्रयोग करता था। प्राचीनकाल में सदाचार का अत्यधिक महत्त्व था तथा ऋषि-मुनियों ने सदाचार पर अत्यधिक बल दिया है। पुराणों में आचार की महिमा का वर्णन करते हुए ब्रह्मा जी ने नारद से कहा - हे नारद! आचार से मनुष्य को सुख मिलता है और आचार बुरे लक्षणों का विनाष कर देता है। आचार शून्य पुरुष को सर्वदा दुःख ही दुःख भोगने पड़ते हैं और वह रोगी तथा छोटी आयु वाला भी हो जाया करता है। आचार का सर्वप्रथम अंष शुद्धि एवं शुचिता बताया है।[8] ऋषियों ने शौच और पवित्रता पर अत्यधिक बल दिया तथा समाज ने भी इसे स्वीकार किया। जिससे प्राचीन समय में भूमि प्रदूषण की समस्या नहीं थी। भूमि पर किसी प्रकार का प्रदूषण न हो उसके निवारण के लिए उपाय एवं प्रायश्चित भी बताए तथा मनुष्य को भविष्यवाणी के रूप में भूमि प्रदूषण के लिए सचेत भी किया।

आधुनिक काल में जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि के साथ ही उपज के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली जमीन का क्षेत्रफल भी बढ़ता जा रहा है। कृषि के उत्पादन

और नए-नए मशीनों के प्रयोग बढ़ने से भूमि का पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। घरों, बगीचों और खेतों में विषाणु कीटनाशकों का उपयोग बढ़ता जा रहा है। अत्यधिक कीटनाषकों का प्रयोग करने से भूमि की उपजाऊ शक्ति क्षीण होती जा रही है और जमीन बंजर होती जा रही है। वर्तमान समय में मनुष्य रसायन विकिरण के प्रयोग से पृथ्वी और उसके जीवों की आधारभूत प्रकृति को बदलने में लगे हुए हैं। इन रसायनों के प्रयोग से भूमि की ऊपरी परत के लाभकारी और महत्त्वपूर्ण जीवों पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से असर पड़ता रहता है। उसके अतिरिक्त कीटनाषियों द्वारा भूमि में नाइट्रीकरण की क्रिया भी मंद पड़ जाती है। जिससे भूमि पर से वृक्ष, वनस्पतियां, पक्षी, प्राणी लुप्त होते जा रहे हैं।[9]

मानव ने अपनी उन्नति के लिए प्रकृति से अत्यधिक छेड़छाड़ की है। मार्ग और महामार्ग बनाने हेतु बुलडोजरों व अन्य मशीनों के प्रयोग से कई जीव-जातियों का नाष हुआ है। वृक्षों के कटने के कारण मिट्टी के कटाव से प्रत्येक वर्ष अनेक क्षेत्रों में बाढ़ आती है। जिससे मिट्टी के द्वारा प्रदूषित जल से अनेक रोग उत्पन्न होते हैं और ये नए रोग चिकित्सकों के लिए समस्या बन जाते हैं।

वर्तमान समय में भूमि प्रदूषण का एक और प्रमुख कारण उद्योग हैं। उद्योगों से बहुत अधिक मात्रा में कूड़ा-करकट एवं रसायन आदि निकलता है जो कि भूमि को दूषित करता है तथा साथ ही साथ जल को भी दूषित कर मनुष्य के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालता है।

भूमि-संरक्षण के लिए ऋषि-मुनियों ने भूमि शुद्धता के महत्त्व को दर्शाया है। मनुस्मृति में कहा है कि उत्तम रीति से लिपे पुते गृह में घृतयुक्त आहुति करके उसका धुंआ फैलाना चाहिए साधु और ब्राह्मण सदा इस धर्म के पालन में प्रवृत्त होते हैं। सदा यज्ञ कार्य ऋषियों का परम कर्त्तव्य और कर्म बताया गया है।[10] भूमि की शुद्धि प्राकृतिक रूप से भी हो जाती है शिव पुराण के अनुसार सूर्य अपनी रश्मियों के द्वारा अपवित्रता को नष्ट कर देता है।[11]

भूमि के उपयोग संबंधी नियम, जनसंख्या नियंत्रण आदि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें परिस्थिति वश स्वच्छता व संतुलन बनाए रखने पर जोर दिया गया है। स्वच्छ पर्यावरण को बनाए रखने हेतु जनसंख्या नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक है। भूमि संरक्षण के लिए भारत सरकार ने 'राष्ट्रिय भूमि उपयोग' और 'बंजर भूमि विकास परिषद्' नाम की दो संस्थाओं की स्थापना की।[12] भूमि कटाव को रोकने के लिए आवश्यक है कि वनों का क्षेत्र बढ़ाया जाए। पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए भूमि पर गंदगी न डालें, स्थान-स्थान पर थूकना, मल-मूत्र त्यागना वर्जित किया जाए तथा घरों के अपशिष्ट पदार्थ, गंदा पानी व मल-मूत्र निष्पादन के युक्तिसंगत उपाय किए

जाएँ। छात्रों को पर्यावरण के विषय में शिक्षा प्रदान की जाए एवं विद्यालय को स्वच्छ रखने की प्रेरणा दी जाए।[13]

जल प्रदूषण एवं संरक्षण

प्रकृति के पाँच तत्त्वों में से जल प्राणियों के लिए अनिवार्य है उसके बिना जीवन असम्भव है। वेदों में जल की औषध रूप में महिमा वर्णित है। जल ही समस्त रोगों को दूर करने वाला और रोग कारणों को नाष करने वाला है। इसलिए जल को सब रोगों की औषध माना गया है।[14] सब जीवों को पूर्णतृप्ति एवं जीवन देने वाला कहा गया है। प्राचीनकाल में जल का प्रयोग कोई भी धर्म अथवा संस्कार हो उसमें होता है जहाँ भी मन्त्रों को प्रस्तुत किया जाता है वहाँ जल आवश्यक है।[15] ऋषि-मुनियों ने प्राचीनकाल में होने वाले जल प्रदूषण के विषय में वर्णन करने के साथ-साथ भविष्यत् काल में होने वाले प्रदूषण के विषय में भी संकेत किया है।

ऋषियों द्वारा जल प्रदूषण के विषय में की गई भविष्यवाणी वर्तमान समय में सत्य सिद्ध हुई। मनुष्य ने प्राकृतिक-तत्त्वों को दूषित करके भविष्य को संकट में डाल दिया है। भारतीय दर्शन में पाँच मूलभूत तत्त्वों में वायु के पश्चात् जल को प्रमुख तत्त्व माना है। यह सारा संकट जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप हुआ है। बढ़ती हुई जनसंख्या से जल एवं वायु प्रदूषण हो रहा है। जल का गुण है कि वह किसी भी पदार्थ को अपने में घोलने की क्षमता रखता है। वर्तमान समय में शुद्ध जल का मिलना असम्भव हो गया है। पृथ्वी पर लगभग 71% जल के स्रोत महासागर तथा सागर है फिर भी विष्व में पेयजल का संकट निरन्तर बढ़ता जा रहा है और शुद्ध पेयजल की प्राप्ति दुर्लभ होती जा रही है। मल-मूत्र, कूड़ा-कचरा, उद्योगों के बचे पदार्थ, विषैले रसायन, कीटनाषक रासायनिक खादों के अवशेष आदि तत्त्व मिलकर जल की शुद्धता को नष्ट करते हैं। जिससे जनजीवन एवं वनस्पति दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। नदियों, तालाबों, झीलों, झरनों, स्रोतों आदि के जल में गन्दगी और हानिकारक पदार्थों के मिल जाने को ही जल का दूषित होना कहा गया है।[16] वर्तमान समय में भावी पीढ़ियों को जल शुद्धता के महत्त्व का ज्ञान कराना अत्यावष्यक है। शुद्ध जल ही स्वास्थ्य, धन, शक्ति एवं दीर्घायु प्राप्त कराता है।

वेदों में शुद्ध जल को दिव्य गुणों से युक्त कल्याणकारी, सुखकारी, कष्ट को दूर करने के लिए चारों ओर बहने वाली जल-धाराएँ, नदियाँ, मधुर जल से युक्त एवं उत्तमपान करने वाले स्थानों से सज्जित करें ऐसा कहा गया है।[17] प्राकृतिक नियम से जल पवित्रता के विषय में उल्लेख किया गया है कि विधिपूर्वक अग्नि में छोड़ी हुई आहुति सूर्य को प्राप्त होती है जिसके कारण वृष्टि होती है और वृष्टि से अन्न

की उत्पत्ति होती है और अन्न से प्रजा।[18] अभिप्राय यह है कि यज्ञ क्रिया से आकाष, जल पवित्र हो जाता है और यह पवित्र और शुद्ध जल शरीर की रक्षा करता है।

वर्तमान समय जल प्रदूषण की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। घरों, उद्योगों, कारखानों, अस्पतालों का कूड़ा-कचरा, मल-मूत्र आदि नदियों में ही जा कर गिरता है और जल को दूषित करता है। अनेक प्रकार के रसायन भी जल में घुलकर उसे जहरीला बनाते हैं। जल प्रदूषण की समस्या का समाधान करने हेतु यह आवष्यक है कि उद्योगों से निकलने वाला अवशिष्ट पदार्थ एवं मल-मूत्र का निष्कासन नदियों में न किया जाए। जलस्रोतों को गंदगी से दूर रखना चाहिए।

जन-साधारण को जल प्रदूषण के संकट से अवगत कराना चाहिए तथा इसे रोकने के लिए उनमें जागरूकता उत्पन्न करनी चाहिए। शुद्ध एवं पवित्र पेयजल प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है। पुराणों में गंगा नदी की विषिष्टता का वर्णन किया है। गम्भीर तथा निर्मल जल से भरी हुई गंगा नदी उत्पत्ति के समय समुद्र को पवित्र करती है।[19] किन्तु आज गंगा का जल अत्यधिक दूषित हो चुका है उसका कारण है कि आस-पास के उद्योगों से अवषिष्ट पदार्थों, घरों का कूड़ा-कचरा एवं मल-मूत्र गंगा के जल में जा कर उसे दूषित कर रहा है।

हमें अपनी नदियों के जल को शुद्ध करने के लिए व्यापक स्तर पर प्रयास करने चाहिएँ ताकि प्रत्येक व्यक्ति को शुद्ध पेयजल प्राप्त हो सके। छात्रों में बाल्यकाल से ही ऐसी अभिवृत्तियों का विकास करना चाहिए ताकि वे नदियों, नालों के पानी में गंदगी, मल-मूत्र का त्याग न करें। उन्हें व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य व उत्तरदायित्व के प्रति सचेत किया जाए। आधुनिक समय में संपूर्ण मानव समुदाय को शुद्ध तथा पर्याप्त मात्रा में पेयजल उपलब्ध करवाने हेतु राष्ट्रिय एवं अंतराष्ट्रिय स्तर पर भरपूर प्रयास किए जा रहे हैं। जल-संरक्षण हेतु अधिनियम बनाए गए हैं। भारत में जल प्रदूषण के नियंत्रण के कुछ असरकारक विधि विधान बनाए गए हैं जिनका उद्देश्य है- जल प्रदूषण का नियंत्रण एवं रोकथाम। नदी-नालों, कूपों, नालियों व भूमि में जल की स्वच्छता बनी रहे। कोई भी व्यक्ति जानबूझ कर किसी भी जहरीले, मादक और प्रदूषित वस्तु को किसी भी नदी, नाले या कुएँ में नहीं जाने देगा और न ही किसी को इसकी आज्ञा देगा। बोर्ड द्वारा बनाए गए नियम-अधिनियमों की उल्लंघना करने पर कड़े-दण्ड का विधान है।

जल की शुद्धि के लिए कुछ अन्य पद्धतियों का प्रयोग भी वर्तमान समय में किया जा रहा है। जिनमें से शैवाल जल-प्रदूषण को दूर करने में सहायक है यह जानवरों को खाने के लिए प्रोटीन देता है। जल को स्वच्छ करने का यह ढंग आर्थिक दृष्टि से अन्य तरीकों की अपेक्षा सस्ता व उपयोगी माना गया है। एक और पौधा है

जो जल-प्रदूषण के शुद्धिकरण के लिए अत्यन्त उपयोगी माना गया है। यह जल में हानिकारक धातुओं को सोखने की क्षमता रखता है। संयुक्त राष्ट्र की क्षमता गन्दे, अप-शिष्ट जल के पोषक तत्त्वों को प्राप्त करने के लिए इन पौधों का उपयोग करते हैं।[20]

इन सब उपायों से जल-शुद्धि के प्रयास करने चाहिएँ ताकि प्रत्येक व्यक्ति को शुद्ध पेयजल प्राप्त हो सके।

वायु-प्रदूषण एवं संरक्षण

वायु पंचमहाभूतों का बीज रूप है। प्राणिमात्र की श्वास-प्रष्वास का आधार वायु ही है। ब्रह्माण्ड का अधिकतर भाग वायु है जिसके बिना कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह सकता। यदि जल प्रदूषित है तो इसे न पीने से व्यक्ति बच सकता है किन्तु यदि वायु प्रदूषित हो जाए तो सांस लेने से नहीं बच सकता क्योंकि जीवित रहने के लिए श्वास लेना तो आवष्यक है।

वैदिक काल में वायु प्रदूषण की कोई समस्या नहीं थी क्योंकि उस समय मनुष्य प्रकृति से प्रेम करता था और उसके संरक्षण के लिए प्रयत्नषील रहता है। वायु किसी प्रकार दूषित न हो उसे संरक्षण के लिए ऋषि-मुनियों ने वर्णन किया है। वेदों ने पंचतत्त्वों के संरक्षण के प्रति बार-बार यही वर्णन किया है कि यज्ञ आहुति उन्हें प्राप्त हो।[21] यज्ञ करने से उस स्थान पर कृमियों का नाष हो जाता है एवं वातावरण शुद्ध हो जाता है। पौराणिक काल में वायु-प्रदूषण की समस्या नहीं थी उस समय ऋषि-मुनियों ने भविष्य के विषय में वर्णन किया है ज्यों-ज्यों कलियुग का समय बढ़ता जाएगा मनुष्य प्रकृति का दोहन करता रहेगा जिसके फलस्वरूप कभी पाला पड़ेगा और कभी आँधी चलेगी। इन उत्पादों के संघर्ष से प्रजा अत्यन्त पीड़ित होकर नष्ट हो जाएगी।[22] कहने का अभिप्राय यह है कि वायु के गुण बदल जाएँगे, वायु सेवन योग्य न रहकर दूषित हो जाएगी एवं व्याधियाँ उत्पन्न हो जाएँगी।

ऋषि-मुनियों के द्वारा की गई भविष्यवाणी वर्तमान समय में हमारे सामने प्रत्यक्ष रूप में है। विष्व की बढ़ती हुई जनसंख्या, उद्योगों के अत्यधिक विस्तार एवं विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप आवागमन के आधुनिक साधनों एवं सुख-सुविधाओं में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों से निकलने वाली विषैली एवं अनुपयोगी गैसों ने हमारे वायुमण्डल को अत्यधिक प्रदूषित कर दिया है। प्रदूषित पर्यावरण से श्वास में घुटन एवं अन्य अनेक श्वास संबंधी रोग उत्पन्न हो रहे हैं। उद्योगों से निकलने वाली इन गैसों से ऑक्सीजन चक्र निरंतर असंतुलित होता जा रहा है। वायु प्रदूषण मानव स्वास्थ्य और प्रकृति के संतुलन को बुरी तरह प्रभावित करता है। प्रदूषित स्थानों पर रहने वाले लोग गले की बीमारियाँ, निमोनिया, श्वास संबंधी रोगों से ग्रस्त हो जाते

हैं। वायु-प्रदूषण जहां प्राणियों को प्रभावित करता है वहीं वनस्पति की पैदावार एवं उसकी बढ़ौतरी पर भी दुष्प्रभाव डालता है। वर्तमान समय में ध्वनि-प्रदूषण भी अधिक बढ़ गया है। प्रकृति के संतुलन और विकास की गति में सामंजस्य नहीं किया गया तो पर्यावरण में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। कारखानों की मषीनों का शोर, यातायात का कोलाहल, मषीनों, मोटरों एवं विमानों से उत्पन्न शोर प्राकृतिक वातावरण की शांति को भंग करता है। मानव-स्वास्थ्य पर भी इसका हानिकारक प्रभाव पड़ता है। शोर-गुल की अधिकता से उत्पन्न प्रदूषण का नाम ही ध्वनि प्रदूषण है। अधिक शोर-ध्वनि मस्तिष्क में तनाव उत्पन्न करती है एवं श्रवण शक्ति समाप्त हो जाती है। ध्वनि प्रदूषण से व्यक्ति की मानसिक शांति भंग हो जाती है तथा उसकी स्मरण शक्ति भी कम हो जाती है।[23] वेदों में प्रदूषण निवारण के लिए यज्ञ अत्यन्त सुगम तथा श्रेष्ठ साधन बताया गया है। वायु, जल और अन्नादि की शुद्धि के लिए हवि आदि अर्थात् औषधिगण से यज्ञ करने का वर्णन उपलब्ध होता है।[24]

यज्ञ को विश्व का नियामक कहा गया है। यज्ञाग्नि में दी गई हवि वायु के सहारे सूर्य की ओर जाकर समस्त अन्तरिक्ष में व्याप्त होती है। सूर्य के प्रभाव में मेघ-मण्डल के साथ धूमामिश्रित हवि के मिल जाने पर वर्षा होती है। हवि से पार्थिव पदार्थ वायु और सूर्य-रश्मि आदि भी शुद्ध होते हैं। जिस प्रकार सूर्य के द्वारा संसार की दुर्गन्ध दूर होती है। अग्नि में घृताहुति देने से बहुत उज्जवल हो जाती है और वायु में जलांष अधिक आ जाने से वृष्टि के द्वारा पृथ्वी को शुद्ध करते हैं।

'अग्निषोभावनेन वां यो वां घृते न दाशति तस्मैदादयतं वृहत्।।[25]

इसलिए प्राचीन महर्षियों ने अग्निहोत्र को दैनिक कर्म के रूप में करने का निर्देश दिया है। पुराणों में भी यज्ञ का वर्णन उपलब्ध होता है। अग्नि में जो अन्न का हवन करता है वह देवयज्ञ कहा गया है।

'अन्नौ जुहोति यच्चान्नं देवयज्ञ इति स्मृतः।।[26]

लिंग पुराण के अनुसार सूर्य ज्योति है इसलिए प्रातःकाल सूर्योदय के समय यज्ञ करना चाहिए।

ज्योतिः सूर्य इति प्रातर्जुहुयादुदिते यतः।[27]

क्योंकि प्रातः काल में सूर्य की किरणों में तेज होता है। धरती पर पड़ने से एवं अग्निहोत्र के धुएँ से उनका तेज और भी बढ़ जाता है जिस कारण कृमियों का नाष होता है।

वैदिक काल में वातावरण शुद्ध था अतः उस समय प्रदूषण की समस्या नहीं थी। किन्तु आधुनिक युग में बढ़ती जनसंख्या, स्वार्थ-सिद्धि, उद्योगों की बहुतयात, वृक्षों का बहुत अधिक मात्रा में काटना, तेल और डीजल से चलने वाले वाहनों का

अत्यधिक प्रयोग, उद्योगों से निकलती हुई विषाक्त गैसों ने हमारे पर्यावरण को अत्यधिक प्रदूषित कर दिया है। इस वातावरण में श्वास लेना भी अत्यंत कठिन होता जा रहा है। कार्बनडाईआक्साइड का अवशोषण करने वाले और ऑक्सीजन छोड़ने वाले वृक्ष और वन लुप्त होते जा रहे है। इसका प्रभाव वायुमंडल पर लगातार पड़ रहा है और पृथ्वी का तापमान दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसी का ही परिणाम है कि ध्रुवीय हिम शिखर पिघलने लगे हैं और समुद्र का जलस्तर बढ़ने लगा है। प्रतिदिन हम समाचार पत्रों एवं दूरदर्षन पर भी देश-विदेश में बाढ़, भूकम्प आदि की घटनाओं के विषय में सुनते हैं। यह सब पर्यावरण के प्रदूषित होने का ही परिणाम है।

स्वच्छ वायु के बिना स्वस्थ जीवन नहीं हो सकता। स्वच्छ वायु का मिलना आधुनिक युग में अत्यन्त दुष्कर हो गया है। आज वायु प्रदूषण ने भूमि जल एवं ध्वनि प्रदूषण की अपेक्षा अत्यधिक विकराल रूप धारण कर लिया है। मनुष्य को जीवित रहने के लिए श्वास लेनी पड़ती है किन्तु जब स्वच्छ वायु ही नहीं होगी तो मनुष्य श्वास किस प्रकार लेगा?

प्रदूषण की इस समस्या का निवारण हेतु जनसाधारण को साथ मिलकर प्रयास करने चाहिएँ और सर्वप्रथम प्रकृति के साथ मिलकर कार्य करने चाहिएँ। हमें प्राकृतिक साधनों और नियमों को दृष्टि में रखते हुए अपने विकास की योजनाओं का निर्माण करना चाहिए।

वायुमण्डल की समस्या को कम करने के लिए कारखानों को जनसंख्या क्षेत्र से दूर स्थापित किया जाना चाहिए। कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया जाए जिससे ग्रामीण लोग शहरों के प्रति आर्कषित न हों। रेडियो, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक किया जाना चाहिए। राष्ट्रिय एवं अन्तराष्ट्रिय स्तर पर पर्यावरण को शुद्ध रखने का अभियान आरम्भ करना चाहिए।[28]

यज्ञादि से पर्यावरण को शुद्ध रखने का प्रयत्न करना चाहिए क्योंकि यज्ञ की प्रदूषणरोधी प्रक्रिया ने वैज्ञानिकों को आश्चर्यचकित कर दिया है। सूर्योदय एवं सूर्यास्त के क्षणों में किए जाने वाले यज्ञ की क्रिया में गाय के घी व चावलों की आहुतियाँ देने से रोगाणुनाशक व शरीर की रोग प्रतिकार शक्ति को बढ़ाने वाली गैसें निकलती हैं। वैज्ञानिकों ने पाया है कि इन गैसों में रोगाणुओं को निष्क्रिय करने की अदभुत क्षमता है।

अमेरिकी मनोचिकित्सकों के अनुसार अग्निहोत्र (यज्ञ) मनोविकारों को रोककर मन को स्थिर एवं शान्त बनाए रखता है।[29] वायु, जल, ध्वनि, भूमि, सूर्य किरणों तथा अनुविकिरण के प्रदूषण को रोकने में यज्ञ की भूमिका अतुलनीय है।

प्रत्येक जाति, सम्प्रदाय एवं वर्ग से सम्बन्ध रखने वाला व्यक्ति यज्ञ कर सकता

है। वर्तमान प्रदूषित वातावरण में अपने परिवार का शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य बनाए रखने का साधन यज्ञ ही है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति भी इसे सुगमता से कर सकता है। अतः यज्ञ करो, स्वस्थ रहो, प्रदूषण मुक्त रहो।

सन्दर्भिका

1. सं0 श0 को0, पृ0 68
2. वि0 ज्यो0, नव 1986, पृ0 39
3. वही
4. अथर्ववेद, 1.1.4
5. वही, 19.71.1
6. यजुर्वेद, 36.17
7. अथर्ववेद, 12.1.45
8. पद्मपुराण, प्र0 खण्ड 2,5
9. पर्यावरण और जीव, प्रेमानन्द चन्दोला, पृ0 36, 38-39
10. मनुस्मृति, 1.49-50
11. षिव पुराण, 1.45
12. मा0 और पया0, पृ0 25
13. वही, पृ0 101
14. ऋ0 10.137.6
15. गृह्यमन्त्र और उन0 विनि0, पृ0 43
16. पर्यावरण और जीव, पृ0 47
17. ऋ0, 1.10.9
18. मनुस्मृति, 3.76
19. आदि पु0, 18.4
20. पुराण साहित्य में पर्यावरण-संरक्षण, शोध-प्रबन्ध, नंजला राठौर, पृ0 132-133
21. ऋ0 वेद, 8.6.54
22. भा0 पु0, 12.10
23. प्रदूषण, धर्मेन्द्र वर्मा, पृ0 142
24. ऋ0 10.168.3
25. वही, 10.93.16
26. लि0 पु0, 16
27. वही, 35
28. पुराण साहित्य में पर्यावरण संरक्षण, पृ0 146
29. वही, पृ0 148